प्रकृति का क्रूर परिहास : जल–प्रलय (बाढ़)

कु. उर्वशी गुप्ता
कक्षा–11
ग्रीनवे सीनियर सेकेण्ड्री स्कूल, रूड़की

प्रकृति सदा से अजेय रही है। मनुष्य प्रकृति पर विजय प्राप्त करने में निरंतर प्रयत्नशील रहा है। वह बराबर इसी प्रयत्न में रहता है कि प्रकृति को अपने वश में कर ले। प्रकृति के साथ मनुष्य ने सृष्टि के प्रारंभिक क्षणों में संघर्ष किया है और आज भी कर रहा है। इस संदर्भ में उसे कहीं सफलता मिली है और कहीं उसे विफलता का मुंह देखना पड़ा है। आधुनिक युग की सुसंस्कृत सभ्यता और वैज्ञानिक अविष्कार मानव की प्रकृति पर विजय का शोषण करते सुनाई पड़ रहे हैं।

अपनी रक्षा के लिए उसने विविध अविष्कार किए हैं और प्रकृति का मुंह तोड़ उत्तर दिया है। कुछ ऐसे भी क्षेत्र हैं जहां मनुष्य प्रकृति की चोटों को चुपचाप सह लेता है। बाढ़ भी ऐसा ही प्राकृतिक प्रकोप है, जिसको मनुष्य की बुद्धि विवशता पूर्ण आंखों से देखती है। इस प्रकोप में मानव अपना सब कुछ स्वाहा कर बैठता है। जल ही जीवन है किंतु प्राणदायक प्राकृतिक तत्व जल जब बाढ़ का रूप धारण कर लेता है तो प्रकृति का एक क्रूर परिहास भी बन जाया करता है।

वर्षा ऋतु में पहाड़ों पर अधिक वर्षा होती है और बर्फ पिघलने के कारण नदियां मस्त होकर इतरा–इठला कर चलने लगती है। इधर मैदान की वर्षा का पानी लेकर सहायक नदियां उनमें मिलती हैं तभी बड़ी–बड़ी नदियां दानवी रूप में समाज का सब कुछ अपहरण करने के लिए दौड़ने लगती हैं। नदियों के इसी विनाशकारी रूप को लोग बाढ़ कहते हैं।

विगत वर्षों में एक बार फिर बाढ़ के भयावह मारक दृश्य देखने का अवसर मिला था। उस सबको सोचकर आज भी कप–कपी छूट जाती है और मारक ठंड में भी पसीना छूटने लगता है। बरसात का मौसम था, चारों ओर घोर वर्षा होने के समाचार आ रहे थे। जिसने जल, थल, नदी, नालों आदि को मिला कर एक कर दिया था।

बाढ़ के परिणाम के कारण काफी जन–धन की हानि उठानी पड़ती है। बाढ़ से अनेकों मकान ढह जाते हैं। सैकड़ों पशु और मनुष्य बाढ़ आने के कारण बह जाते हैं। कितने डूब कर मर जाते हैं। कितने विपदावस्था में असहाय हो जाते हैं। सहायता पहुंचाने वालों को भी दो–दो, तीन–तीन दिन लग जाते हैं। खाने की कोई व्यवस्था नहीं होती है। पानी भी पीने के योग्य नहीं रह जाता है। भोजन के अभाव में मनुष्य और पशुओं की विचित्र दशा हो जाती है। बाढ़ दिन में भी आती है और रात में भी, परंतु रात की बाढ़ दिन की अपेक्षा लाखों गुनी अधिक भयानक होती है। चारों ओर हृदय विदीर्ण करने वाली ''बचाओ–बचाओ'' की ध्वनियां सुनाई पड़ती हैं। बच्चे और स्त्रियां चीख मार–मार कर रोने लगते हैं। बाढ़ के बाद भूमि इस योग्य नहीं रहती कि इसमें अगली फसल पैदा की जा सके। अपने खाने तथा पशुओं के चारे की समस्या मनुष्य के सामने आ जाती है।

बाढ़ की दृष्टि से हमारे देश का भाग्य बड़ा खराब है। प्रतिवर्ष असंख्य मनुष्य बेघर हो जाते हैं। 16 जून, 2013 की भीषण आपदा में पूरा विश्व कांप गया क्योंकि बाढ़ का आना प्रकृति के साथ छेड़–छाड़ का परिणाम है। इसका ज्वलंत उदाहरण हमने 16 जून, 2013 को उत्तराखंड में देख लिया।

नदी काल बन गई

नदी से सटे मदकोट बाजार को गोरी नदी के कटाव ने निगल लिया, यह बाजार ही इस कस्बे की जान हुआ करती थी, इस जगह आपदा के चलते मौतें तो नहीं हुई, लेकिन काफी लोगों की रोजी–रोटी चली गयी। नदी किनारे बसे मकान, दुकान सब कुछ नदी में समा गए और जो बच गए हैं आधे नदी में लटके हुए हैं।

संभालने का मौका

गोविन्द घाट की पार्किंग में खड़ी लगभग साठ से ज्यादा गाड़ियां बहते हुए मलबे की जद में आ गई, जो इन्हें अपने साथ बहाकर ले गया। ये गाड़ियां कहां हैं? किसी को नहीं पता।

उत्तराखंड में आई प्राकृतिक आपदा के विनाश का कहर धारचूला के लोगों ने सबसे ज्यादा झेला है। दुर्गम पहाड़ी इलाके में बसे धारचूला के लिए 16 जून, 2013 का वो दिन बेहद खौफनाक था। धौली गंगा नदी अपने पूरे ऊफान पर थी। आस–पास के गांव में बसे लोगों ने शायद इतना पानी अपने जीवन में कभी नहीं देखा था, इस इलाके में पड़ने वाले चार गांवों का नामोनिशान भी नहीं बचा है। कुछ लोगों का कहना है कि "जिंदा बचने के लिए लाशों ने दिया सहारा"।

देश के कोने–कोने से चंदा इकट्ठा करके उनकी सहायता की जाती है। बाढ़ पीड़ितों को सरकार भी सहायता पहुंचाती है। बाढ़ एक प्राकृतिक अभिशाप है। इसका प्रभाव बड़ा भयंकर होता है। देश की सरकार इस संहारकारी प्राकृतिक प्रकोप के प्रति संवेदी एवं सजग दिखाई पड़ती हैं।

बूंद–बूंद को तरसता भारत जल से तभी संपन्न होगा, जब हम जल का मूल्य पहचान कर उसका सदुपयोग करेंगे और उसे उसी प्रकार खर्च करेंगे जैसे एक कंजूस अपने पैसों को खर्च करता है। शाब्दिक रूप से रहीम का यह दौहा उचित ही है –

"रहिमन पानी राखिए, बिन पानी सब सून।
पानी गए न ऊबरै मोती, मानुष, चून।।"